जगे देश की क्या पहचान
पढ़ा लिखा मजदूर किसान।

# अपना दाना

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

# अपना दाना

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

वाणी प्रकाशन
नयी दिल्ली-110002

ISBN 81-7055-436-5

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित

संस्करण : दिसम्बर 1995

मूल्य : *12.00* रुपये

कम्प्यूटेक सिस्टम, दिल्ली-110032
द्वारा लेज़र कम्पोज
शुभम ऑफसेट प्रेस, दिल्ली-110032
द्वारा मुद्रित

APNA DANA
by Sarveshwar Dayal Sexana

# अपना दाना

वह एक गरीब लड़का था। स्कूल जाते समय उसकी माँ उसके बस्ते में थोड़े से भुने चने रख देती थी। खाने की छुट्टी में वह कक्षा के बाहर सीढ़ियों पर बैठकर उन्हें खाता था, जबकि दर्जे के सारे लड़के घंटा बजते ही स्कूल के फाटक की ओर भागते थे। वहाँ खोमचे वालों की भीड़ लगी रहती थी। उसकी माँ ने कह रखा था कि बेटा, अपना दाना ही खाना चाहिए; न दूसरों से माँगना चाहिए न लालच करना चाहिए।

वह सीढ़ियों पर बैठा चने टूँगता रहता और खोमचे वालों की आवाजें सुनता रहता—लेकिन उठकर नहीं जाता। लड़के अक्सर अपने पत्ते लिए उसके सामने से ही-ही करते गुजर जाते। वह उनकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता।

एक दिन एक लड़का उसके पास आया। वह उसकी कक्षा का सबसे तेज और शरीफ लड़का था। उसने उससे कहा, "तू मेरा एक काम कर देगा ?"

"क्या ?"

"आ, बताता हूँ।"

वह अपने चने खा चुका था। उसने उसका हाथ पकड़ा और उसे फाटक की ओर ले चला, जहाँ खोमचे वालों की ओर लड़कों

की भीड़ थी। बच्चे खाने की चीजों पर धक्कमधक्का करते टूटे पड़ रहे थे। लेकिन उसे इससे क्या ? वह तो अपना दाना खा चुका था।

उस लड़के ने एक खोमचे वाले के चारों तरफ लगी भीड़ में रास्ता बनाकर उसे घुसा लिया, फिर खुद भी उसकी बगल में आ खड़ा हुआ। उसने देखा, छोटे-छोटे चवन्नी के आकार के बिस्कुटों का बड़ा-सा थाल है। बीच में एक लकड़ी का चक्का है जिसके किनारे पर एक से लेकर सौ तक की गिनती है। चक्के के बीच में एक सूई है। सूई पर घुंडी लगी है। लड़के घुंडी पकड़कर सूई घुमाते हैं, जितने नम्बर पर सूई रुकती है, खोमचे वाला उतने बिस्कुट उसे दे देता है।

साथ वाले लड़के ने एक इकन्नी खोमचे वाले को दी और उससे कहा, "सूई मेरा यह दोस्त घुमाएगा।"

उसने उसके कहने पर डरते-डरते सूई घुमाई और वह सौ के अंक पर आकर रुकी। खोमचे वाले ने सौ बिस्कुट उस लड़के को दे दिए। वह फूला नहीं समा रहा था। बिस्कुट लेकर वह भीड़ से बाहर निकला। उसने उसे भी कुछ बिस्कुट देने चाहे। लेकिन उसने कहा, "मैं अपना दाना खा चुका हूँ।"

उसने पाया। उसके मन में थोड़ा लालच आ रहा है। मन समझा रहा है—"तेरा भी हिस्सा इसमें है। पैसे उसके थे तो क्या हुआ, सूई तो तूने घुमाई थी।"

वह लड़का कहे जा रहा था, "तू बड़ा भाग्यवान है। हम सब सूई घुमाते हैं, पर दस-पाँच पर ही घूमकर रुक जाती है, सौ पर नहीं रुकती। तूने तो मजा ला दिया। लोग कहते हैं, जो नेक होता है उसका हाथ जहाँ भी लगता है बरक्कत होती है। तू नेक

है, यह साबित हो गया।" वह कहता जा रहा था और मजे से कुर्र-कुर्र करके छोटे-छोटे बिस्कुट खाता जा रहा था। उसके मन में लालच की तरंगें उठ-गिर रही थीं, पर वह मन को बस में किये हुए था।

अब अक्सर यह होने लगा। कोई-न-कोई लड़का पकड़कर उसे ले जाता, सूई घुमवाता और कभी सौ, कभी उसके आस-पास, अस्सी-नब्बे बिस्कुट लेता और मजे से खाता। एकाध बार पूछने पर जब उससे जवाब मिला कि वह अपना दाना खा चुका है, तो धीरे-धीरे लड़कों ने पूछना भी छोड़ दिया। लेकिन उसका मन उन बिस्कुटों के स्वाद की ओर भागता। उसके जी में आता कि उसके पास भी इकन्नी होती तो वह भी इतने सारे बिस्कुट खाने का मजा लेता।

एक दिन उसने माँ से कहा कि उसे एक इकन्नी चाहिए। पर उसे सुनना पड़ा कि एक इकन्नी में कितने और जरूरी काम हो सकते हैं। वह मन मसोसकर रह गया।

ज्यों-ज्यों उसकी शोहरत एक नेक लड़का होने की फैलती गयी और चक्का चलाने के लिए लोगों में उसकी माँग बढ़ती गयी, उसकी एक अपनी इकन्नी होने की इच्छा भी जोर मारती गयी।

आखिर एक दिन उससे नहीं रहा गया। उसने मौका देखकर माँ की सन्दूकची के कागज के नीचे एक इकन्नी छिपा दी। जब वह इकन्नी वहाँ कई दिनों तक पड़ी रही और माँ के हिसाब-किताब से निकल गयी, तो उसने चुपचाप उसे निकाल लिया और स्कूल ले गया।

कहाँ रखे वह उसे ? वह बनियान और जांघिया पहनकर
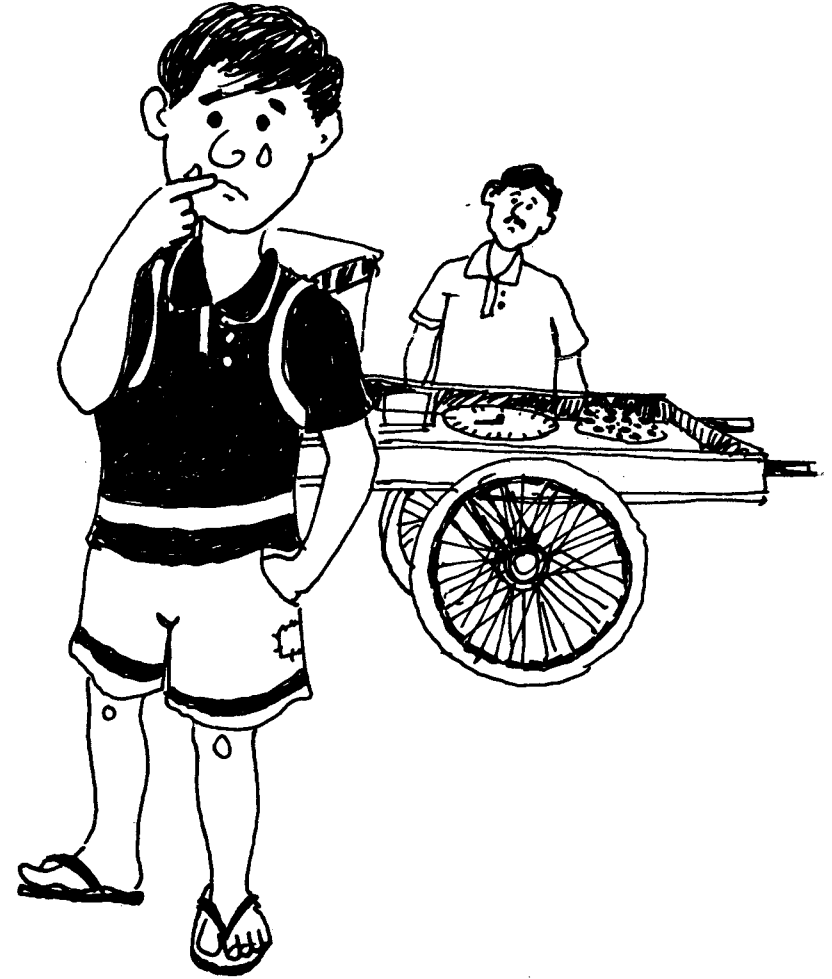
स्कूल जाता था। जेब किसी में नहीं थी। उसने पिता को भी धोती की टेंट में रुपये रखते उसने देखा था। उनकी नकल में वह भी अपनी रबर टेंट में रखता था। वह सुरक्षित भी रहती थी। उसने इकन्नी टेंट में रख ली। जांघिए का नाड़ा जहाँ होता है वहाँ उसे खोंस, कई लपेटे लगा, टेंट कस ली।

वह तेजी से स्कूल आया। उसे लगा, वह हवा में उड़ रहा है, बादशाह है। दर्जे का हर बच्चा उसे कमजोर और गरीब दिखाई देने लगा। उसे उस दिन जो कुछ पढ़ाया जा रहा था, कुछ समझ में नहीं आ रहा था। बार-बार ध्यान बिस्कुट के थाल की ओर जा रहा था। सूई सौ पर आकर ठहरी दीख रही थी और वह बिस्कुट गिन रहा था। उसे बेहद उतावली थी। कब खाने का घंटा बजे और वह भागे। लेकिन समय खिंचता ही जा रहा था।

अचानक खाने की छुट्टी का घंटा बजा। वह तेजी से दौड़ा-दौड़ा फाटक पर पहुँचा। उस समय कोई भी बच्चा वहाँ नहीं था। उसने बिस्कुट वाले के खोमचे के पास पहुँच सूई पर हाथ रखा ही था कि बिस्कुट वाले ने कहा, "पहले इकन्नी भी निकालो।"

उसने जांघिये की टेंट में हाथ लगाया, पर इकन्नी वहाँ नहीं थी। उसके पैरों तले की जमीन खिसक गयी—कहाँ चली गयी इकन्नी ? कक्षा से भागते समय भी उसने टटोला था। वह थी...

"क्या हुआ ?" बिस्कुट वाले ने पूछा।

वह कुछ बोला नहीं। उसका चेहरा लटक गया था और उसकी आँखों से टपाटप आँसू गिर रहे थे।



बिस्कुट वाले को उस पर दया आ गयी।

"पैसे गिर गए ? कोई बात नहीं, तुम चक्का चलाओ, पैसे कल दे देना।"

लेकिन वह मुँह फेर कर लौट पड़ा। बच्चों की भीड़ पास आती जा रही थी और वह वापस कक्षा की सीढ़ियों पर लौट रहा था—सोचता हुआ। आखिर इकन्नी कहाँ गयी ? उसे जरूर चोरी की सजा मिली है। उसने लालच किया है। जितना ही वह सोचता, दुखी होता जाता। मन गलती पर बार-बार पछताता। घर पहुँचकर वह उदास पड़ा रहा।

शाम को माँ न जाने क्यों उस दिन सन्दूकची खोल पैसों का हिसाब लगाने बैठी। फिर मुस्कराकर बोली, "बेटा, तेरी किस्मत अच्छी है। देख कागज के नीचे से एक इकन्नी निकल आयी। तू मांग रहा था न। ले इसे कल स्कूल ले जाना, जो जी में आए खाना।"

लेकिन वह उठा नहीं। न उसने हाथ बढ़ाए, न इकन्नी ली। बस, चुपचाप पड़ा रहा। माँ से नजरें मिलाने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ रही थी। माँ ने अँधेरे में नहीं देखा कि वह रो भी रहा है।

# सफेद गुड़

दूकान पर सफेद गुड़ रखा था। दुर्लभ था। उसे देखकर बार-बार उसके मुँह में पानी आ जाता था। आते-जाते वह ललचाई नजरों से गुड़ की ओर देखता, फिर मन मसोस कर रह जाता।

आखिरकार उसने हिम्मत की और घर जाकर माँ से कहा। माँ बैठी फटे कपड़े सिल रही थी। उसने आँख उठाकर कुछ देर दीन दृष्टि से उसकी ओर देखा, फिर ऊपर आसमान की ओर देखने लगी और बड़ी देर तक देखती रही। बोली कुछ नहीं। वह चुपचाप माँ के पास से चला गया। जब माँ के पास पैसे नहीं होते तो वह इसी तरह देखती थी, वह जानता था।

वह बहुत देर गुमसुम बैठा रहा। उसे अपने वे साथी याद आ रहे थे जो उसे चिढ़ा-चिढ़ाकर गुड़ खा रहे थे। ज्यों-ज्यों उसे उनकी याद आती उसके भीतर गुड़ खाने की लालसा और तेज होती जाती। एकाध बार उसके मन में माँ के बटुए से पैसे चुराने का ख्याल आते ही वह अपने को धिक्कारने लगा और इस बुरे ख्याल के लिए ईश्वर से क्षमा माँगने लगा।

उसकी उम्र ग्यारह साल की थी। घर में माँ के सिवा कोई नहीं था। यद्यपि माँ कहती थी कि वे अकेले नहीं हैं, उनके साथ ईश्वर है। वह चूँकि माँ का कहना मानता था इसलिए उसकी यह बात भी मान लेता था। लेकिन ईश्वर के होने का पता नहीं

चलता था। माँ उसे तरह-तरह से ईश्वर के होने का यकीन दिलाती। जब वह बीमार होती, तकलीफ में कराहती तो ईश्वर का नाम लेती और जब अच्छी हो जाती तो ईश्वर को धन्यवाद देती। दोनों घंटों आँखें बन्द करके बैठते। बिना पूजा किए हुए वे खाना नहीं खाते। वह रोज सुबह-शाम अपनी छोटी-सी घंटी लेकर, पालथी मारकर संध्या करता। उसे संध्या के सारे मंत्र याद थे, उस समय से ही जब उसकी जबान तोतली थी। अब तो वह साफ बोलने लगा है।

वे एक छोटे-से कस्बे में रहते थे। माँ एक स्कूल में अध्यापिका थी। बचपन से ही ऐसी कहानियाँ माँ के मुँह से सुनता आया था, जिसमें यह बताया जाता था कि ईश्वर अपने भक्तों का कितना ख्याल रखते हैं। और हर बार ऐसी कहानी सुनकर वह ईश्वर का सच्चा भक्त बनने की इच्छा से भर जाता। दूसरे भी उसकी पीठ ठोंकते और कहते, 'बड़ा शरीफ लड़का है। ईश्वर इसकी मदद करेगा।' वह भी यह मानता कि ईश्वर उसकी मदद करेगा लेकिन कभी कोई सबूत इसका उसे नहीं मिला था।

उस दिन, जब वह सफेद गुड़ खाने के लिए बेचैन था तब उसे ईश्वर याद आया। उसने खुद को धिक्कारा, उसे माँ से पैसे माँगकर उसे दुखी नहीं करना चाहिए था। ईश्वर किस दिन के लिए है ? ईश्वर का ख्याल आते ही वह खुश हो गया। उसके अन्दर एक विचित्र-सा उत्साह आ गया। क्योंकि वह जानता था कि ईश्वर सबसे अधिक ताकतवर है। वह सब जगह है और सब कुछ कर सकता है। ऐसा कुछ भी नहीं जो वह न कर सके। तो क्या वह उसे थोड़ा-सा गुड़ नहीं दिला सकता ? उसे, जो कि बचपन से ही उसकी पूजा करता आ रहा है और जिसने कभी



सींग सड़,
पत्ते झड़ !

पेड़ के पत्ते झड़ गए। एक कौआ उस पेड़ पर आकर बैठा। कौए ने पूछा : "पेड़, पेड़, तेरे पत्ते कैसे झड़ गए ?" पेड़ ने उत्तर दिया :

जूँ चट्ट, पानी लाल,
सींग सड़,
पत्ते झड़,
कौआ काना !

कौआ काना हो गया। वह कौआ उड़ते-उड़ते एक बनिये की दूकान पर जा बैठा। बनिए ने पूछा : "कोए, कौए, तुम काने कैसे हो गए ?" कौए ने उत्तर दिया :

जूँ चट्ट, पानी लाल,
सींग सड़,
पत्ते झड़,
कौआ काना
बनिया दीवाना !

बनिया दीवाना हो गया। वह पागलों जैसा काम करने लगा। एक रानी साहिबा आयीं। उन्होंने बनिये से पूछा : "बनिये, बनिये, तू दीवाना कैसे हो गया ?" बनिया बोला :

जूँ चट्ट, पानी लाल,
सींग सड़,
पत्ते झड़,
कौआ काना,
बनिया दीवाना,

रानी नचनी !

रानी नाचने लग गई। उधर से राजा साहब निकले। उन्होंने पूछा : "रानी, रानी, तुम क्यों नाच रही हो ?" रानी ने कहा :

जूँ चट्ट, पानी लाल,
सींग सड़,
पत्ते झड़,
कौआ काना,
बनिया दीवाना !
रानी नचनी,
राजा ढोल बजावें !

राजा ढोल बजाने लग गए। यह देखकर और लोग भी नाचने और गाने लगे। किसी को यह पता न लगा कि इसका कारण क्या है।

# अब इसका क्या जवाब है ?

सड़क पर आते ही बच्चों ने घेर लिया। वह पहली बार इतनी रात गए घर से निकला था। खा-पीकर जल्दी सो जाने की उसकी आदत थी, पर उसके साथी बच्चों ने उसे भूत देखने के लिए बुलाया था। उसका भूत पर यकीन नहीं था, लेकिन और सभी बच्चों को था। वे भूत का इस तरह बयान करते थे कि सुनने वाले के रोंगटे खड़े हो जाएँ।

उसके आते ही सब खामोश हो गए। उन्हें देखकर लगता था कि सब सहमे हुए हैं।

"घर में कोई जाग तो नहीं रहा है ?" एक ने दबी जबान से पूछा।

"नहीं, सब सो रहे हैं।" उसने जवाब दिया।

"थोड़ी दूर आगे चलना पड़ेगा, जूते हाथ में ले ले।"

उसने देखा—सबने अपने-अपने जूते हाथ में ले रखे हैं।

"क्यों ?"

"भागना पड़े तो तेजी से भाग लेंगे।"

"क्या भूत दौड़ नहीं सकता ?" उसने फिर पूछा।

"नहीं, उसकी एड़ियाँ आगे और पंजे पीछे होते हैं।"

अचानक खड़खड़ हुई और सब चौकन्ने हो गये। यह हवा

के कारण पत्तों की खड़खड़ाहट थी। सड़क के किनारे कई सूखे पेड़ थे। चारों ओर हल्का अँधेरा छाया हुआ था। पास चल रहे साथियों के चेहरे जरूर साफ दीख रहे थे, लेकिन दूर-दूर तक धुंध थी—जैसे हवा में धूल मिली हो। कुछ दूर चलकर वे रुक गए। सड़क का वह एकान्त कोना था। आसपास कोई मकान नहीं था। गाँव दूर छूट गया था। वहाँ से चारों ओर दूर-दूर तक बस खेत ही खेत दिखायी पड़ते थे।

"अभी कुछ देर रुकना पड़ेगा," एक ने फुसफुसाकर कहा।

"वह ठीक बारह बजे आता है।" दूसरा बोला।

"उसे देखकर डरना नहीं।" तीसरे ने समझाया।

"न शोर मचाना और न चीखना-चिल्लाना हमारे साथ चुपचाप लौट चलना।" चौथे ने कहा।

"क्यों ?" उसने पूछा।

"वह नाराज हो सकता है।"

"क्या करेगा नाराज होकर ?"

"पकड़ लेगा।"

"लेकिन दौड़ तो वह सकता नहीं ?"

"दौड़ नहीं सकता, पर हमें अपने पास खींच तो सकता है, अपने हाथ बढ़ा सकता है। भूत अपना हाथ जितना लम्बा चाहे कर सकता है !" उन्होंने समझाते हुए कहा।

"एक बार उसका हाथ बढ़ते-बढ़ते हमारे घर तक पहुँच गया था।" एक ने थरथराते हुए कहा।

वह जहाँ खड़ा था वहाँ से बहुत दूर खेत के बीचोंबीच एक घना पेड़ दीख रहा था। उनका कहना था, आधी रात को भूत उसके नीचे आता है। सब साँस रोके इंतजार कर रहे थे। दिन



में उसके उल्टे पैरों के निशान उस पेड़ के नीचे उन्होंने देखे हैं ...वह काफी देर तक वहाँ रहता है, फिर चला जाता है।

"तुम लोगों ने कभी पास से जाकर उसे नहीं देखा ?" उसने पूछा।

"पास कौन जाएगा ? क्या जान देनी है ?" उनके चेहरे पीले पड़ रहे थे।

"लेकिन आज हमें चलना चाहिए।" उसने कहा।

"ऐसी गलती तुम कभी मत करना। उसके पास जाकर कोई आज तक लौटा नहीं। इस पेड़ के नीचे अक्सर लोग सुबह मरे हुए पाए गए हैं।"

फिर उन्होंने दो-चार कहानियाँ सुनायीं, जिनमें बताया गया था कि कैसे एक औरत की जली हुई लाश वहाँ कई साल पहले मिली थी, और कैसे एक आदमी इस पेड़ की डाल से फाँसी लगाकर मर गया था।

"लेकिन इनका भूत से क्या मतलब ?" उसने पूछा।

"ये लोग ही भूत बन गए हैं।"

"यह सब झूठ है ! मैं भूत को नहीं मानता।" उसने कहा। लेकिन पहली बार वह भीतर से डर रहा था और डर के मारे आयी कंपकंपी को रोक रहा था। उसकी कल्पना में उन मरे हुए लोगों के भयानक चेहरे दिखायी दे रहे थे। इन्हें उसने कभी देखा भी नहीं था। इसीलिए वे चेहरे बार-बार भयानक रूप धारण कर लेते थे।

अचानक कुछ और अँधेरा हो गया। वे सब आपस में गुँथ गए। उन्होंने उसका हाथ हिलाकर, उँगली उठा उस पेड़ के नीचे की ओर इशारा किया। सचमुच वहाँ एक सफेद-सफेद चीज हिल
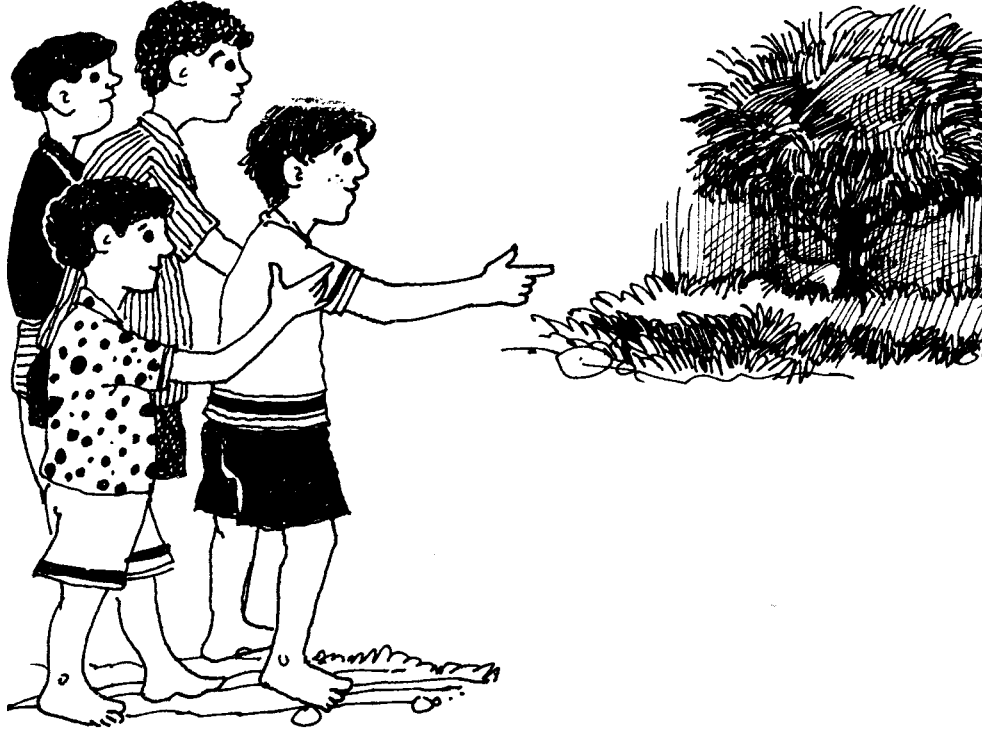
रही थी। यह सफेद चीज अब तक वहाँ नहीं थी। अचानक कहाँ से आ गयी ?...वह सोचने लगा।

पेड़ सड़क से कोई दो सौ कदम पर था। आस-पास कोई गाँव-घर भी नहीं था। आखिर यह चीज वहाँ आयी तो कहाँ से ?

"देखा, यही है भूत !" उन्होंने लगभग घिघियायी आवाज में कहा और आपस में गुँथे खड़े रहे।

उसे भी, उन्हें इतना डरा देख कुछ डर लगने लगा। एक बार जी में आया कि अब वह भूत देख चुका है, इन लोगों के साथ लौट चले। वह लौटने को हुआ पर उसे खयाल आया कि उसके ये साथी उसके बारे में क्या सोचेंगे कि वह भूत को नहीं मानता, फिर भी डर गया...और सब लोग कल मिलकर उसे चिढ़ाएँगे। कहीं इन्हीं लोगों ने तो कोई तमाशा नहीं किया ?...लेकिन यदि किया होता तो ये सब खुद क्यों इतने डरे हुए होते ! वह बड़ी देर तक इसी उधेड़बुन में खड़ा रहा।

"चल, लौट चलते हैं !" उन्होंने कहा।

उनके ऐसा कहने से एक अजीब-सी ताकत उसे महसूस हुई। उसे लगा वह उनसे बेहतर है। वह इस हद तक डरा नहीं है जितने ये सब डरे हुए हैं। वह आधा डरपोक ही सही, पर इन पूरे डरपोकों के सामने उसे अपनी भद्द नहीं पिटवानी है, अपनी इज्जत रखनी है।

"नहीं, मैं तो देखूँगा यह क्या चीज है !" उसने हिम्मत बटोरकर कहा।

"यह भूत है, कोई चीज नहीं कि तू देखेगा।"

"तुम लोग चाहो तो यहाँ रहो, मैं देखकर आता हूँ।"

"नहीं, पागलपन मत करो !" उन्होंने उसे पकड़ लिया।

उनके पकड़ने से उसे दुगुना जोश आ गया। वह हाथ छुड़ा, सीधे सड़क से खेतों की मेंड पर उतर गया। दो-चार कदम चलते ही उसे महसूस हुआ कि उसके पैरों में पत्थर बँधे हैं। वह आगे बढ़ नहीं पा रहा है, पर लौटना तो और अधिक अपमानित होना था। आँखें बन्द कर धीरे-धीरे बढ़ने लगा। कई बार वह डर से काँपने लगा और उसे ऐसा लगने लगा कि वह चल नहीं पाएगा। यहीं गिर जाएगा। लेकिन वह खड़खड़ाता-काँपता आखिर उस पेड़ के नीचे पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही उसमें एक अजीब शान्ति-सी भर उठी...जब उसने देखा कि एक सफेद रंग का साँड वहाँ चुपचाप खड़ा जुगाली कर रहा है। वह कुछ देर उसे खड़ा देखता रहा। फिर उत्साह में भरा लौट पड़ा।

सड़क पर आकर उसने देखा, लड़के वहाँ से काफी आगे जाकर एक-दूसरे से गुँथे खड़े हैं।

"तुम लोग डरपोक हो, भूत-वूत कुछ नहीं, वह तो साँड था। चलो देखो।"

वह उन्हें खींचकर ले चला। पेड़ तो दीखने लगा पर उसके नीचे उस समय वह सफेद चीज नहीं थी।

"चला गया।" वह बोला।

"नहीं, वह भूत ही था, तुझे देखकर साँड बन गया होगा। भूत अक्सर वेश बदल लेते हैं !" वे अपनी बात पर अटल थे। अब इसका उसके पास क्या जवाब हो सकता था ?

# टूटा हुआ विश्वास

बस्ता लादे-लादे उसकी पीठ और कंधे दुख रहे थे। पैर आगे बढ़ नहीं रहे थे। बार-बार आँखों के सामने मास्टर जी काले-कलूटे भूत जैसे आ जाते थे और उनकी बेंत जीभ जैसी लपलपाने लगती थी। कक्षा की याद एक डरावने जंगल में बदल गयी थी। वह घबरा रहा था। कक्षा का काम पूरा नहीं हुआ था। उसने तय किया कि वह स्कूल नहीं जाएगा। पैर अपने-आप खेल के मैदान की ओर बढ़ने लगे। पर इतना भारी बस्ता लेकर वह खेल भी तो नहीं सकता था और उसे कहीं छोड़ भी नहीं सकता था—खो जाने का डर था। सामने एक मन्दिर था। वह हिचकता हुआ मन्दिर में गया। छोटा मन्दिर यहाँ उस समय कोई नहीं था। आरती हो चुकी थी। पुजारी भी जा चुका था। इस मन्दिर से वह खूब परिचित था। परिचित तो वह भगवान से भी था। बहुत फूल चढ़ाए थे उसने, घर में भी वह पूजा करता था। ईश्वर पर उसे भरोसा था। उसने सोचा वह अपना बस्ता यहाँ भगवान की देखरेख में रख दे, तो कैसा हो ! यहाँ वह सुरक्षित रहेगा। भला भगवान के पास से उसे कौन उठा ले जाएगा ? उसने बस्ता मन्दिर में रखा और दिन भर खेलने में व्यस्त रहा। तीसरे पहर

स्कूल की छुट्टी के वक्त जब मन्दिर में पहुँचा तो बस्ता वहाँ नहीं था। कोई उठा ले गया था। वह भगवान की मूरत की ओर आँखें भरे देखता रहा। मन्दिर में चारों ओर अँधेरा था। महादेव जी की मूरत उसे काली-कलूटी डरावनी लग रही थी और वह चारों ओर तमाम बैलों की जीभ ही जीभ लपलपा रही थीं। उसे याद नहीं कि वह मन्दिर कैसे एक डरावना जंगल हो गया था, जिसमें वह डरा-सहमा गुमसुम खड़ा रहा था। जाने कब तक खड़ा रहा। सूरज डूबते उसे कोई घर ले गया। उसे लगा कि अब वह घर पहले वाला घर नहीं है और न उसके आस-पास की दुनिया ही।

●●●